पहला हिन्दी संस्करण
अक्तूबर १९६८

लेखक
डा. वज़ीर हसन आब्दी

सम्पादक
मुंशी

मूल्य २ रुपये ५० पैसे

न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली में डी पी. सिनहा द्वारा मुद्रित और उन्हीं के द्वारा पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा) लिमिटेड, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली, की तरफ से प्रकाशित।



कॉपर्निकस

कछुए की पीठ पर हाथी

तुमको कछुए की पीठ पर खड़ा कर दिया जाय, तो कितने देर तक खड़े रह सकते हो? तुम कहोगे कि खड़े होते ही फिसल कर धड़ाम से गिर जायेंगे। और अगर कहीं किसी तरकीब से खड़े हो भी गये तो बेचारा कछुआ ही दब कर मर जायेगा।

मगर सुनो तो। पुराने जमाने में कुछ लोग कहते थे कि आदमी तो आदमी, कछुए की पीठ पर हाथी खड़ा रह सकता है। और एक नहीं तीन-तीन। ऐसे-वैसे, छोटे-मोटे हाथी नहीं, बड़े ताकतवर, बड़े बलवान, जो अपनी सूंड पर हमारी पूरी पृथ्वी को उठा सकते हैं। न तो पृथ्वी के बोझ से हाथी दबते और न हाथी के बोझ से कछुआ मरता। थकता भी कोई नहीं। जब से पृथ्वी बनी तब से हाथी और कछुआ, सभी इसी तरह लदे-फदे खड़े हैं और जब तक पृथ्वी रहेगी तब तक इसी तरह अपनी-अपनी जगह पर खड़े रहेंगे।

कुछ लोग उन से भी तेज थे। वे कहते कि हाथी की सूंड तो बड़ी चीज, पृथ्वी तो गाय के सींग पर टिकी रह

सकती है। वे मानते थे कि हमारी दुनिया गाय के एक सीग पर टिकी हुई है और उसी पर टिकी रहती है। जब कभी गाय का मन होता है, एक सीग से बदल कर दूसरे सीग पर पृथ्वी को रख लेती है। यह काम पल भर मे हो जाता है। इसी पल भर मे जमीन हिल जाती है, बड़े-बड़े महल धड़ाम से गिर पड़ते है, कही जमीन फट जाती है और लोग समझते हैं भूचाल आ गया। फिर पृथ्वी दूसरे सीग पर टिक जाती है और वही टिकी रहती है।

रोज सबेरे तुम देखते हो कि सूर्य पूर्व मे निकलता है और धीरे-धीरे पश्चिम की तरफ बढ़ता जाता है। दोपहर में वह ठीक सिर के ऊपर मालूम होता है। उसके बाद वह उतरने या ढलने लगता है। फिर ठीक पश्चिम मे जाकर कही छिप जाता है। चारों ओर घुप्प अधेरा छा जाता है। बारह घंटे बीतने पर, न जाने कैसे, फिर वहीं पहुँच जाता है जहां एक दिन पहले सबेरे था। ऐसा लगता है जैसे कल सूर्य ने कोई यात्रा ही नही की थी। उसका नया सफर उसी तरह शुरू होता है जैसे एक दिन पहले शुरू हुआ था। रोज का यही ढर्रा है। सूरज न कभी थकता है और न उसका रास्ता बदलता है।

हमारे बाप-दादा, बल्कि उनके भी बाप-दादा, रोज मुह फाडे देखा करते थे। उनकी समझ में नही आता था कि सूर्य रातो-रात पश्चिम से पूर्व कैसे पहुँच जाता है। दिन में तो वह पूर्व से पश्चिम की ओर चलता दिखाई पडता है। क्या रात को वह उल्टी यात्रा करके पश्चिम से पूर्व पहुँच जाता है ?

लाल बुझक्कड का नाम तो तुमने सुना ही होगा। एक बार कोई हाथी रात को उनके गांव से कहीं जा रहा था। गांव वालो ने हाथी नही देखा था। दूसरे दिन सवेरे गाव वाले उठे तो क्या देखते है कि जमीन पर बड़े-बडे निशान बने हैं। सब चक्कर में पड़ गये। कोई कहता भगवान ने एक पेड़ काट कर उसके तने से गांव की सीमा पर मोहर लगायी है। कोई कहता कि पृथ्वी को छाला पडा था जो फूट कर सूख गया है। "हटो। हटो।" गाव के सभी धुरन्धर अपनी बुद्धि का जोर लगा रहे थे कि लाल बुझक्कड स्वय आ पहुंचे। देखते ही बोले, "अरे यह क्या ? इतने से ही परेशान हो ?

"लाल बुझक्कड़ बूझ गये, बूझे और न कोय।
पैर मे चक्की बांध के हिरण न कूदा होय।"

गाव के सभी लोग लाल बुझक्कड की विद्वत्ता

और बुद्धिमानी को मान गये। उन्हे विश्वास हो गया कि सचमुच हिरण ही चक्की बांध कर कूदा है। उसके पांव में बंधी चक्की के चिन्ह सब जगह पडे हैं।

इसी ढंग से पुराने जमाने के लोग भी सूर्य के बारे में अटकलबाजी किया करते थे। कुछ लोग कहते कि एक देवता रोज सवेरे एक बहुत बड़े रथ पर चढ़ कर आकाश की यात्रा करता है। उसके रथ के घोड़े बड़े तेज और जानदार हैं। रथ के पहिए असली सोने के हैं। देवता का राजमहल पूर्व में है। जब राजा का रथ महल से निकलता है तो सवेरा होता है, उसके रथ के पहियों का सोना चमकता है तो धूप होती है। जब यह रथ हमारी आंखों से ओझल हो जाता है तो रात हो जाती है। यह रथ पाताल का चक्कर लगाते हुए फिर पूर्व में पहुंचता है। यही रथ सूर्य है।

कुछ लोग कहते थे कि रथ-वथ कुछ नही है। हमारी पृथ्वी के पूर्व और पश्चिम मे दो बड़े-बड़े फाटक हैं। हमारा सूर्य आग का एक बड़ा-सा गोला है। सवेरे कुछ फरिश्ते (दूसरे लोक के अधिकारी) पूर्व का फाटक खोल देते हैं और बड़ी शान से इस गोले को खीच कर पश्चिम की ओर ले जाते हैं। जब वह पश्चिमी फाटक के पीछे पहुंच जाता है तो फाटक बन्द कर दिये जाते

हैं और रात हो जाती है। फिर सवेरा होते-होते फरिश्ते पूर्व वाले फाटक के पीछे सूरज को पहुचा देते हैं। यही रोज होता रहता है।

कुछ लोग कहते कि फरिश्ते-वरिश्ते कुछ नहीं। सूरज एक आग का गोला है जो अपने-आप चलता है। लेकिन वह पूर्व से पश्चिम की ओर हो जा सकता है, किसी दूसरी दिशा में नहीं और सिर्फ दिन में ही यात्रा कर सकता है। रात को जैसे सारी दुनिया सोती है उसी तरह सूर्य भी पाताल में सोता है। पाताल लोक हमारी पृथ्वी का उल्टा है। हमारे यहा जो दिशा पूर्व से पश्चिम है, वह पाताल में पश्चिम से पूर्व हो जाती है। रात भर आराम करने के बाद सूरज पाताल में पूर्व से पश्चिम की ओर यात्रा करता है। शाम होते-होते फिर पाताल के पश्चिम अर्थात हमारे पूर्व में पहुँच जाता है।

इस प्रकार दो सूरज हैं और दोनों साथ-साथ चलते है। एक पृथ्वी पर, एक पाताल में। जो सूरज आज पृथ्वी पर दिखाई पडता है वह कल पाताल में दिखाई पडेगा और जो आज पाताल में है, वह कल हमारी पृथ्वी पर चमकेगा।

ऐसी लाल बुझक्कड की अटकलबाजियां हमारी

पृथ्वी और सूर्य के बारे मे चलती रहती थी। एक अटकल चालू हो गयी तो उसे दैवी सिद्धान्त का नाम देकर मनवाया जाता था। ऐसी लाल-बुझक्कड़ी बाते मानने में कोई भी मीन-मेख करता तो जबर्दस्ती उससे मनवायी जाती।

फिर भी, हर जमाने में मनुष्य इस भेद को समझने का प्रयत्न करता रहा कि हमारी पृथ्वी टिकी है या चल रही है। सूर्य, चन्द्रमा और दूसरे नक्षत्रों से उसका क्या सम्बन्ध है? दिन रात क्यों होते है? कभी जाड़ा पड़ता है, कभी गरमी होती है—ऐसा क्यो होता है?

इन सब प्रश्नों का उत्तर आज तुम्हें मालूम है। तुम जानते हो कि पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा और दूसरे नक्षत्र सब उसी तरह घूम रहे है जैसे बहुत से बच्चे एक-दूसरे का हाथ पकड़ कर घेरा बना लेते है और घुमरी खेलने लगते है। सूर्य इस घेरे के बीच में है। पृथ्वी और दूसरे नक्षत्र उसके चारो ओर है।

जिस व्यक्ति ने सबसे पहले अटकलबाजी खत्म करके इन प्रश्नो का ठीक उत्तर निकालने की कोशिश की उसका नाम था कॉपर्निकस! निकोला कॉपर्निकस!

तो निकोला कॉपर्निकस की कहानी।

झीलों के देश में

दूर उत्तर-पश्चिम मे सात समुद्र पार हमारे देश से पाच हजार मील दूर एक छोटा सा सुन्दर देश है। झीलों का देश। उस देश का नाम है · पोलैण्ड!

चार हजार झीले। हर तरफ पानी ही पानी। कही दलदल। कही दूर तक लम्बे-लम्बे घास के मैदान। कही लहलहाते हुए जई और गेहूं के खेत। आलू के हरे पत्तों मे पीले-पीले फूल। बीच में इठलाती हुई नदी—विश्चुला! यह है इस झील-देश की सुन्दरता।

जाड़े मे तो कुछ और ही रग हो जाता है। जिधर देखो बर्फ ही बर्फ। झीले जमी पडी रहती है। ढाई महीने विश्चुला नदी भी ठहरी रहती है। सारा जीवन जैसे ठप्प हो गया हो।

और गरमी आते ही सारा सोया हुआ जीवन एकदम जाग उठता है।

आज से सात-आठ सौ वर्ष पहले की बात है। पोलैण्ड मे जगल बहुत अधिक थे। पास पडोस मे छोटे-छोटे राजाओ के राज्य थे। ये राजा आपस मे रोज

लड़ा करते। आज एक राजा ने किसी का राज्य हड़प लिया, तो कल किसी दूसरे ने उसी को मार डाला। यह तमाशा पोलैण्ड ही नहीं, पूरे यूरोप में रोज हुआ करता था। न किसी को शान्ति थी, न किसी को चैन। आये दिन लोग घर द्वार छोड़, बीवी-बच्चों को साथ ले, कही सिर छिपाने का ठिकाना ढूढ़ने के लिए निकल जाया करते थे।

कुछ छोटे-मोटे राजा किसी मैदान या जगल में आकर अपना डेरा डाल देते। बस, मान न मान, मैं तेरा मेहमान। सारी भूमि के मालिक बन बैठते। वहां के निवासियों को जबर्दस्ती अपना दास बना लेते। उन्ही से सारी भूमि पर खेती कराते, उन्ही से अपने लिए बड़े-बड़े महल बनवाते।

सारे लोग दिन-रात काम करते रहते। और राजा लोग ? ये राजा लोग अपने महल में बैठे मौज उड़ाया करते। बढ़ई, लोहार, कपड़ा बुनने वाले और दूसरे शिल्पी सुन्दर-सुन्दर चीजे तैयार करते-करते थक जाते, लेकिन उन्हे कभी चैन से रोटी नसीब न होती। ये शिल्पी किसी न किसी तरह इस नरक से भाग निकलने की कोशिश करते। लेकिन राजा लोग उन्हे किसी प्रकार भी जाने नही देते थे।

फिर भी कुछ शिल्पी और व्यापारी राजाओं के चंगुल से निकल भागते और दूर किसी नये नगर में जाकर बसेरा लेते। वही उन्हे पहली बार आजादी की हवा में सांस लेने का मौका मिलता। उनके परिश्रम से उस नगर की खुशहाली और भी बढ़ने लगती।

ऐसे ही कई शहर झीलों के देश में भी बन गये—क्रेकाव, तोरन, कुल्म आदि। इन स्वतंत्र शहरों में पास-पडोस के देशो के छोटे-मोटे व्यापारी और शिल्पी भाग-भाग कर बसने लगे।

झीलो के देश के पास ही जर्मनी का राज्य है। वहा एक प्रदेश है—उत्तरी साइलीशिया। बड़ी सुन्दर भूमि, हर तरफ लाल ही लाल। चारो ओर भूमि के नीचे तावे के भण्डार दबे हुए। हर साल ढेरों तांबा उत्तरी साइलीशिया की खानो से निकाला जाता और दूसरे देशो के बाजारों मे जाकर विकता। फिर भी उत्तरी साइलीशिया के लोग रोजी की तलाश में दूर-दूर के देशो मे भटका करते।

यही एक छोटा-सा व्यापारी था। नाम था: निकोलस। बेचारा रोटी की तलाश में घूमते-घूमते झीलों के देश मे आ पहुंचा और क्रेकाव नगर में बस गया। यहा उसने अपना व्यापार जमाना शुरू किया

और कुछ ही दिनो मे अच्छा खाता-पीता व्यापारी बन गया।

क्रेकाव नगर में उसे सुख ही सुख था। अपनी जन्मभूमि मे उसका जीवन यद्यपि दुख में कटा था, तो भी जन्मभूमि की याद उसके दिल से नहीं गयी। जानते हो उसने क्या किया? उसने अपने नाम के आगे तांबे के देश वाला कॉपर्निक्क जोड़ लिया।

तो यह व्यापारी निकोलस कॉपर्निग्क काफी दिनो तक क्रेकाव नगर में रहा। दिमाग का तेज और मेहनत का धनी। एक ओर उसका व्यापार बढ़ रहा था, दूसरी ओर लोग उसकी बुद्धिमानी की प्रशंसा कर रहे थे।

कुछ वर्ष बाद सन् १४५८ में वह तोरन नगर आ गया। यहां उसका व्यापार क्रेकाव से भी अधिक चलने लगा। नगर के बड़े-बड़े घरानों से उसका मेल हो गया।

इसी नगर में एक पुराना घराना था। उसका नाम था: वात्सलरोद। वात्सलरोद भी असल मे तांबे के देश के ही रहने वाले थे। निकोलस की तरह वे लोग भी रोजी की तलाश मे बहुत पहले भाग कर आये थे और यहीं बस गये थे। इस परिवार की कई पीढ़ियां तोरन नगर में गुजर चुकी थीं। परिवार के लोग सर-

कारी अफसर, पादरी और विद्वान के रूप में मशहूर थे।

इसी परिवार की एक लडकी बार्बरा वात्सलरोद से १४६४ में निकोलस कॉपर्निग्क का विवाह हो गया। कुछ ही दिनों में तरक्की करके निकोलस तोरन का बडा हाकिम (मैजिस्ट्रेट) बन गया। अब उसके दिन चैन से बीतने लगे।

दिन बीतते गये! दुनिया में बडी-बडी घटनायें घटने लगीं। यूरोप मे लोग नई दुनिया की खोज में दूर-दूर समुद्री यात्रा पर जाने लगे। हमारे अपने देश मे कबीर, चैतन्य और वल्लभाचार्य जैसे सन्तों के प्रेम-सदेश गूजने लगे और गुरु नानक का जन्म हुआ।

इसी जमाने में १९ फ़रवरी १४७३ को निकोलस कॉपर्निग्क के घर एक पुत्र ने जन्म लिया। अपने पिता के नाम पर ही उसका नाम रखा गया—निकोलस कॉपर्निग्क।

यही निकोलस कॉपर्निग्क बाद में निकोला कॉपर्निकस के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

भाई-बहन

निकोलस के घर में तीन और बच्चे थे। उसका भाई ऐण्ड्रयू, बहने बार्बरा और कैथेरीना थी। तीनों निकोलस से बड़े थे। हर घड़ी घर मे धमा-चौकड़ी मची रहती। भाई-बहन खूब खेलते, खूब घूमते। वह सबसे छोटा था इस कारण सब उसको खूब प्यार करते थे। बार्बरा बड़े गम्भीर स्वभाव की थी। खेलते-खेलते एकदम अलग होकर कही कोने में जा बैठती और वही चुपचाप सोचती रहती। कैथेरीना को हसी-मजाक और धमा-चौकडी मे बड़ा मजा आता था। जब भी मौका पाती वह खेल मे निकोलस के कान ऐंठना न भूलती थी। ऐण्ड्रयू सबसे बडा था और उसकी निकोलस से खूब पटती थी।

दोनों भाई घूमते-घूमते कभी किसी बाग की तरफ निकल जाते, तो कभी किसी झील की ओर। विश्चुला नदी के किनारे पहुँच कर तो वे घंटो बैठे रहते। बड़े-बड़े जहाज बत्तखो की तरह विश्चुला नदी पर तैरते रहते। निकोलस आखे गडाये जहाजो को देखता रहता।

उसे ऐसा लगता मानो जहाज नही, बल्कि जमीन का वह टुकडा, जिस पर वह वैठा है, खुद चल रहा है।

कभी-कभी गर्मी के जमाने में घर के सभी लोग शहर से वाहर शाम को टहलने के लिए जाते। यहाँ अंगूर की वेले दूर-दूर तक फैली रहती और वच्चे मौका पाते ही वेलों के नीचे दौड़ने लगते। निकोलस लताओं के वीच से चाद की किरणो को आता देख कर आनन्द मे भर उठता। अपने भाई ऐण्ड्रयू को वह किरणें दिखाता। कभी-कभी वह लताओ के नीचे से चांद के निकलने का इन्तजार करता रहता।

इस परिवार की तोरन नगर के वड़े-वड़े परिवारों से मैत्री थी। कभी-कभी जब वडी दावने होती तो सभी घरो से सैकडो वच्चे जमा हो जाते। ये वच्चे अपने घरो मे जो वाते सुनते उन्ही के वारे मे आपस में कानाफूसी करते। वडे-वूढे तो खाने-पीने और हंसी-मजाक मे लगे रहते, लेकिन वच्चे शहर में होने वाली वे सारी वाते एक-दूसरे को बता देते जो वडे-वूढे एक-दूसरे से छिपाया करते।

निकोलस को ऐसी दावतो मे वडा मजा आता। उसे दुनिया भर की वाते सुन कर वडी खुशी होती। वह इन सब वातो के वारे मे बरावर सोचा करता और

अपने भाई ऐण्ड्रयू को जरूर बताता।

लेकिन हंसी-खुशी के ये दिन बहुत जल्द बीत गये। निकोलस मुश्किल से अभी १० वर्ष का था कि १४८३ मे उसके पिता का देहान्त हो गया। पढाई-लिखाई अभी तक घर पर ही चल रही थी। अब वह भी रुक-सी गयी। निकोलस की माँ सोच मे पडी रहती कि इन बच्चों का भविष्य क्या होगा।

निकोलस के एक मामा थे। नाम था—लूकस वात्सलरोद। वह ईसाई धर्म के पादरी थे। पिता के मरने के बाद पादरी मामा ने सभी बच्चो को अपने पास बुला लिया।

पादरी मामा ने दोनो भाइयो को पहले तोरन नगर के ही एक स्कूल में पढ़ने के लिए भेजा, जहां वह खुद किसी जमाने में पढाते थे। कुछ ही दिनों बाद दोनो भाई पास के एक नगर व्लुक्लावेक के एक धार्मिक स्कूल में पढ़ने के लिए भेज दिये गये। यहाँ से जो लड़के पढ़ कर निकलते उनका क्रेकाव विश्वविद्यालय में दाखिला हो जाता था।

निकोलस का इस स्कूल मे बडा मन लगता। यहां एक मास्टर थे जिनका नाम था—वोदका (जिसका रूसी भाषा में अर्थ है—शराब)। यह बडे विद्वान और

सरल स्वभाव के पुरुष थे। इसलिए उन्होने अपना नाम बदल कर 'ऐब्सटीमियस' रख लिया था जिसका अर्थ है—सात्विक जीवन व्यतीत करने वाला।

तो यह सात्विकी गुरु निकोलस को बहुत प्यार करते थे। उन्हे धूप-घडियां बनाने का बडा शौक था। निकोलस जब भी मौका पाता, सात्विकी गुरु से इसी विषय पर बाते करता रहता।

कहते है कि ब्लुबलावेक नगर के बड़े गिरजाघर मे जो धूपघडी लगी थी, वह सात्विकी गुरु और नन्हे निकोलस ने ही तैयार की थी।

राजा मामा

दिन वीतते गये !

निकोलस के भाई-वहन वड़े हो रहे थे। कैथेरीना की चंचलता वढ़ती जा रही थी। कुछ ही दिनो वाद वह शादी करके अपने पति के घर चली गयी। वार्वरा की गम्भीरता वढ़ती गयी और वह हर घड़ी चिंतन में लगी रहती। जल्द ही उसने सन्यास ले लिया और भक्तिन (नन) वन कर सारा जीवन ईसाई धर्म को अर्पित कर दिया।

और लूकस मामा जिन्होने पिता के मरने के वाद निकोलस और सभी वच्चों को अपने सरक्षण में ले लिया था ? दिन-प्रति-दिन वह तरक्की करने लगे। अभी कुछ दिनो पहले तक वह फ्राउएनवर्ग नगर के पादरी थे और अव उन्हे एर्मलान्द प्रदेश का महा-पादरी वना दिया गया। कुछ ही दिनो मे लूकस एर्मलान्द के धर्मराज वन वैठे। अव वह केवल पादरी ही नहीं, राजा भी हो गये थे।

वह भी अजीव जमाना था। यूरोप के रहने वाले

एक ओर तो राजाओं और दूसरी ओर पादरियों की चक्की के बीच पिस रहे थे। जब भी राजा को मौका मिलता, वह लोगों की जान-माल और शांति की रक्षा के बहाने सारी पूजी ऐंठ लेता। उधर जब पादरी का दाव लगता तो वह बची-खुची पूजी, दूसरे लोक में समृद्धि और शांति की प्राप्ति के नाम पर, छीन लेता।

इसके विरोध में धर्मसुधार तथा राष्ट्रीयता की भावना धीरे-धीरे उत्पन्न हो रही थी। कही धर्म को समय के अनुकूल बनाने की लहर उठ रही थी।

लेकिन एर्मलान्द के पादरी राजा बड़े ही तेज आदमी थे। वह अपनी प्रजा को हर प्रकार से सुखी रखने की कोशिश कर रहे थे और चाहते थे कि एर्मलान्द में शाति बनी रहे। इसी कार्य के लिए वह निकोलस और ऐण्ड्रयू दोनो को पादरी-राज्य में ऊंचे पद दिलवाना चाहते थे।

निकोलस जब १८ वर्ष का हुआ तो उसे ऐण्ड्रयू के साथ क्रेकाव पढने के लिए भेज दिया गया। क्रेकाव मे बहुत बडा विश्वविद्यालय था जहां जर्मनी, हंगरी, इटली, स्विटजरलैण्ड, स्वीडन और दूसरे दूर-दूर के देशो के विद्यार्थी पढने आया करते थे।

१४९१-९२ का साल। निकोलस और उनके

भाई के साथ ७० और नये विद्यार्थी विश्वविद्यालय मे दाखिल हुए। नये मित्र। नया शहर। अलग-अलग भाषा। अलग-अलग बोली। आपस मे बातचीत भी एक बहुत पुरानी भाषा—लैटिन—मे होती थी। सभी विद्यार्थी यही भाषा बोलने की कोशिश करते थे। अपनी भाषा जाने या न जाने, लेकिन लैटिन भाषा जानना बड़े शान की बात समझी जाती थी। लोग अपने नाम भी बदल कर इसी भाषा के अनुसार रख लेते थे। निकोलस ने भी शौक मे अपना नाम लैटिन ढग का कर लिया और वह अपने को निकोला कॉपर्निकस कहने लगा।

अब तो उसका समय दिन-रात पढ़ने-लिखने मे बीतने लगा। बडे-बड़े प्रोफेसरो के लेक्चर सुनना और उन पर आपस में बहसे करना। विषय भी पढाये जाते थे दुनिया भर के! घटो लैटिन भाषा के पुराने ग्रथो का अध्ययन और उनका अनुवाद। प्राचीन यूनानी दर्शन तथा नीति। ज्यामिति। भूगोल। और सबसे बढ कर धर्म की शिक्षा। उसी के साथ-साथ गणित ज्योतिष और और खगोल-शास्त्र। मजा तो यह कि हर बात के सबूत के लिए कोई पुराना कथन ढूढ निकालना और ज्योतिष से भाग्य तथा भविष्य की बाते बताना। इसी प्रकार के लेक्चर और वाद-विवाद क्रेकाव विश्व-

विद्यालय मे चलते रहते थे।

इन नीरस लेक्चरो मे किसी भी विद्यार्थी को मजा नही आता था। अधिकाश विद्यार्थी तो बस इसी चक्कर मे रहते कि किसी तरह विश्वविद्यालय से बी० ए० की डिग्री ले ले। बस उसके बाद तो फिर मजे ही मजे! यूरोप भर मे कही भी वह पादरी, बड़े सरकारी अफसर या किसी विद्यालय मे प्रोफेसर बन सकते थे।

लेकिन जहाँ यह हालत थी वहा राष्ट्र-प्रेम और धर्म-सुधार की भावना भी कुछ विद्यार्थियो तथा प्रोफेसरो मे अगड़ाइया ले रही थी और क्रैकाव विश्वविद्यालय मे कुछ छोटे-मोटे गुट ऐसे भी थे जो इस प्रकार की बहसो मे भाग लिया करते थे।

कुछ लोगो ने सत्य की खोज मे प्राचीन यूनानी ग्रन्थो का गूढ अध्ययन शुरू किया। वे इस नतीजे पर पहुँचे कि सुनी-सुनाई बातो और दूसरो के कथन को सत्य का दर्जा नही दिया जा सकता।

क्रैकाव विश्वविद्यालय मे गणित विभाग के कुछ प्रोफेसर सबसे आगे थे और उन्होने खगोल-शास्त्र तथा ज्योतिष को अन्धविश्वास के चक्कर से निकाल कर गणित के ठोस सिद्धातो पर खड़ा करने की कोशिश की। अब तक खगोल-शास्त्र मे सिर्फ यह पढाया जाता

था कि सितारो की चाल का किसी व्यक्ति के जीवन पर क्या असर पड़ता है। लेकिन जमाना वदल रहा था और क्रेकाव विश्वविद्यालय में गणित के प्रोफेसर अलबर्ट ब्रुदजेव्स्की इसको एक व्यावहारिक विज्ञान के रूप में विकसित करने का प्रयत्न कर रहे थे। यूरोप के नाविक नयी दुनिया की खोज मे दूर-दूर समुद्रों का चक्कर लगा रहे थे। उन्हे इस बात की बहुत सख्त जरूरत थी कि वे सितारों को देख कर यह जान सके कि उनका जहाज समुद्र में किस स्थान पर है और वे अपना रास्ता कैसे पहचानें।

क्रेकाव विश्वविद्यालय में इस दिशा की ओर काफी कदम बढ़ाया जा रहा था और दूर-दूर से विद्यार्थी आकर खगोल-शास्त्र तथा गणित की शिक्षा प्राप्त करने लगे थे।

इसी वातावरण में निकोला कॉपर्निकस ने भी गणित और खगोल-शास्त्र का अध्ययन शुरू किया। सितारों को देखने और उनकी दूरी का अनुमान लगाने के लिए जो यंत्र विश्वविद्यालय में थे उनका इस्तेमाल भी उसने सीख लिया।

ब्रुदजेव्स्की से यद्यपि उसने स्वयं कभी शिक्षा प्राप्त नही की तथा ब्रुदजेव्स्की से उसने जो प्रेरणा

प्राप्त की वह जीवन भर उसे नयी-नयी खोजों के लिए प्रेरित करती रही।

धीरे-धीरे क्रेकाव विश्वविद्यालय में निकोला कॉपर्निकस के जीवन के पाच वर्ष बीत गये। फिर घर को वापसी।

पांच वर्ष पहले साथ में ७० विद्यार्थी दाखिल हुए थे, जिनमें से सिर्फ १४ बी. ए. पास हुए और एक एम. ए.। ५५ ठंडे-ठंडे अपने घर वापस। डिग्री कोई नही।

इन्ही ५५ में था निकोला कॉपर्निकस।

पादरी की डिग्री

निकोला कॉपर्निकस घर लौट आया। अब मामा को फिक्र हुई कि उसे जल्द से जल्द पादरी बनवा दे।

एर्मलान्द के राज्य का प्रबन्ध करने के लिए पादरियो की एक परिषद् होती थी। छोटी सी परिषद्। यह पादरी राजा की धर्म तथा राज्य के कामो मे मदद करती थी। इस परिषद् की नियुक्ति ईसाई धर्म का सबसे बड़ा राजा 'पोप' किया करता था।

निकोला के घर लौट कर आने के कुछ ही दिनों बाद इस परिषद् का एक सदस्य मर गया। मामा ने सोचा यह अच्छा मौका है, अब निकोला को पादरी बनवाया जा सकता है।

लेकिन मामा की पोप से नही पटती थी। इस-लिए किसी दूसरे आदमी को पादरी बना दिया गया। मामा को बडा दुःख हुआ।

मामा ने सोचा कि कोई दूसरी जगह खाली होने तक क्यो न निकोलस को धार्मिक कानून पढने के लिए कही बाहर भेज दिया जाये ?

बस ! फिर क्या था ? फौरन निकोला कॉपर्निकस इटली के बोलोना नगर मे भेज दिया गया।

बोलोना का विश्वविद्यालय यूरोप के सबसे पुराने विश्वविद्यालयो मे से था। वहां के रंग-ढग कुछ अजीब थे। विद्यार्थियो को तो पूरी आजादी थी, लेकिन प्रोफेसरो के साथ कडाई होती थी। विश्वविद्यालय के सबसे बडे अफसर (रेक्टर) का चुनाव भी विद्यार्थी करते थे। कभी-कभी तो ऐसा होता था कि किसी बेचारे को जबर्दस्ती चुन कर लडके रेक्टर बना देते थे।

अध्यापकों की हालत बहुत तबाह रहती थी। लडके अगर उनकी कक्षा मे न आये तो बेचारो की तनखाह काट ली जाती थी। इन सब बातों का नतीजा यह कि पढाने वाले खूब जी लगा कर पढाते। कुशाग्र छात्रो से वे दोस्ती भी बहुत रखते थे, ताकि उनकी पढाई का डका बजता रहे।

सुबह तडके गिरजाघर के घटे बजते। लड़को की आखें खुल जाती। प्रात सात बजे तक कक्षा होती। दोपहर के भोजन के बाद फिर तीन घटे पढाई होती। इसके अलावा सारे समय तरह-तरह के वाद-विवाद और बहस-मुबाहसे चलते रहते, जिनमे विद्यार्थी और अध्यापक, सभी भाग लेते।

निकोला कॉपर्निकस धार्मिक कानून की शिक्षा प्राप्त कर रहा था। लेकिन उसका मन कानून की पढ़ाई में नही लगता था। वह फुर्सत के समय दूसरे विषयो के बारे में जानने की कोशिश करता रहता।

इसी विश्वविद्यालय में एक प्रोफेसर थे—मारिया दा नोवारा। यह बहुत बड़े विद्वान थे। गणित तथा खगोल-शास्त्र पढ़ाते थे। उनकी विद्वत्ता की पूरे यूरोप में चर्चा थी। उस समय यूरोप के कुछ विद्वान यह समझते थे कि ईसाई धर्म के नाम पर विद्या का अन्त कर दिया गया है, और विद्या प्राप्त करने तथा सत्य को समझने के लिए हमे प्राचीन यूनानियो की तरह खोज करनी होगी।

यूनानियों का विचार था कि विश्व की हर एक वस्तु का रूप ज्यामिति से समझा जा सकता है और वस्तुओं का आपसी सम्बन्ध गिनती से पहचाना जा सकता है।

तो, जो लोग इस प्रकार प्राचीन यूनानी साहित्य के अध्ययन पर जोर देते थे, उन्हे बहुत से धर्मावलम्बी लोग, धर्म-विरोधी कहने लगते थे। फिर भी ये विद्वान, हर तरह की तकलीफ सह कर भी अपनी खोज मे लगे रहते। प्रोफेसर मारिया दा नोवारा की गिनती इन

विद्वानों के नेताओं में थी ।

कॉपर्निकस उनकी बातो से बहुत प्रभावित हुआ और उन्ही के साथ रह कर यूनानी भाषा, गणित तथा खगोल-शास्त्र का अध्ययन करने लगा ।

मामा ने उसको आकाश में रहने वाले फरिश्तों और देवताओं के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए भेजा था ! और वह था कि प्रोफेसर नोवारा के साथ आकाश के तारों और नक्षत्रों की चाल खोजने लगा !

दो वर्ष बाद १४९८ में बड़ा भाई ऐन्ड्रयू भी पढने के लिए बोलोना आ गया । ऐण्ड्रयू तो कानून की पढाई में कायदे से लग गया, लेकिन निकोला कॉपर्निकस की वही चाल रही ।

सन् १५०० का साल ! महात्मा ईसा की मृत्यु के डेढ हजार वर्ष बीत चुके थे । सभी इसाई देशों में बडी धूम-धाम थी । रोम नगर में, जहां पोप महात्मा ईसा के नाम से राज्य करता था, वहां की धूम-धाम का तो कहना ही क्या ! सारे ईसाई देशों के प्रतिनिधियों का वहा जमाव था । साल भर तक भारी उत्सव चलता रहा ।

निकोला कॉपर्निकस को भी रोम जाना पडता—तमाशाई की हैसियत से नही, बल्कि एर्मलान्द राज्य

के प्रतिनिधि के रूप मे। वह साल भर रोम मे रहा। वड़े-वड़े राजाओ और पादरियो से उसकी मुलाकात हुई।

लेकिन इतने पर भी उसका अपना धन्धा चलता ही रहा और वह तारो की चाल का अध्ययन करता रहा। नवम्बर के महीने में जव चन्द्रग्रहण हुआ तो उसने वड़े विस्तार से उसका अध्ययन किया।

आकाश पर चमकने वाले तारो के अध्ययन के साथ-साथ कॉपर्निकस का एक और अध्ययन भी चल रहा था। साल भर मे उसने देखा था कि बहुत से लोग ऐसे भी है कि जिन्हे गलत कामो के लिए धर्म की आड़ लेने में कोई सकोच नही होता। ये ही लोग मनुष्य को सत्य की ओर जाने से रोकते थे।

धीरे-धीरे वोलोना मे निकोला कॉपर्निकस को पांच वर्ष वीत गये। लेकिन कानून की डिग्री न अव मिलती है, न तव मिलती है! उधर मामा ने उसे पादरी भी नियुक्त करवा दिया। लेकिन कॉपर्निकस का तो पादरी वनने का मन नही था। वह तरह-तरह से टाल-मटोल करता रहा।

टाल-मटोल आखिर कव तक चलती? अन्त मे निकोला को वोलोना और प्रोफेसर दा नोवारा से विदा लेनी पड़ी।

२७ जुलाई सन् १५०१ ! गिरजाघर। कॉपर्निकस को भारी-भारी कपड़े पहनाये गये। मन्त्र पढे गये। निकोला कॉपर्निकस को पादरी बना दिया गया।

लेकिन कॉपर्निकस का मन तो कही और लगा हुआ था। वह पुरोहित बन कर क्या करता ? एक बार फिर बहाना ! मानव जाति की सेवा के लिए चिकित्सा विद्या प्राप्त करेगा। काम भी बडा शुभ। पादरी अगर रोगियो की सेवा नही करेगा तो कौन करेगा ?

बस अब क्या था ? निकोला कॉपर्निकस को छुट्टी मिल गयी। वह पढने के लिए एक बार फिर भाग निकला।

पढ़ाई खत्म

इटली का पदुआ नगर। चारों ओर हरे-भरे मैदान। पूर्व की ओर ठाठे मारता एड्रियाटिका समुद्र। इस नगर में दूर-दूर के विद्वानों ने, जो अपने देशो के अन्धविश्वासियों से परेशान थे, पनाह ली थी। कुछ ही दिनों में यह नगर विद्या का बहुत बडा केन्द्र बन गया।

निकोला कॉपर्निकस चिकित्सा-शास्त्र का अध्ययन करने के लिए यही आया। उसकी फिर यही दिनचर्या। रोज विद्वानो के लेक्चर सुनना और बहसे करना।

लेकिन कॉपर्निकस का मन चिकित्सा-शास्त्र की पढ़ाई में नही लगा। पढाई होती भी अजीव ढग से थी। अध्यापक एक पुस्तक से रोगो का वर्णन पढ कर सुनाते और विद्यार्थी तोते की तरह उनके शब्दो को दोहराते जाते। न किसी रोगी को देखना, न रोग की परीक्षा करना।

जानते हो कॉपर्निकस ने अब क्या किया ?

वह गम्भीरता से कानून का अध्ययन करने लगा।

उसने सोचा कि लगे हाथ कानून की डिग्री ही ले ली जाय।

दो वर्ष बीत गये। अब वह कानून की परीक्षा देने के लिए पूरी तरह तैयार था। लेकिन वहा का हाल ही अजीब था। विद्यार्थी परीक्षा की तैयारी कर तो लेते थे, पर परीक्षा देने से बहुत डरते थे। पास होने वाले का दिवाला निकल जाता क्योकि उसे विश्वविद्यालय भर के दोस्तो को दावत देनी पड़ती। इसी डर से अधिकतर विद्यार्थी पढ़ते तो कही और थे, किन्तु परीक्षा कही और देते थे।

अस्तु, कॉपर्निकस पदुआ से बहुत दूर फरारा चला गया और सन् १५०३ में "डाक्टर आफ कैनन लॉ" (विधि शास्त्राचार्य) की डिग्री लेकर फिर पदुआ लौट आया।

अब ?

अब पदुआ में फिर वही चिकित्सा की पढ़ाई की खिच-खिच। अब की बार उसे एक और प्रोफेसर मिल गये, जिनका नाम था गेरोलैमो फेरोकास्त्रो। वह बहुत बड़े दार्शनिक व खगोल-शास्त्री होने के साथ-साथ चिकित्सा विज्ञान में भी निपुण थे। उनमें भी कॉपर्निकस के पहले गुरु दा नोवारा की भांति सुधार की

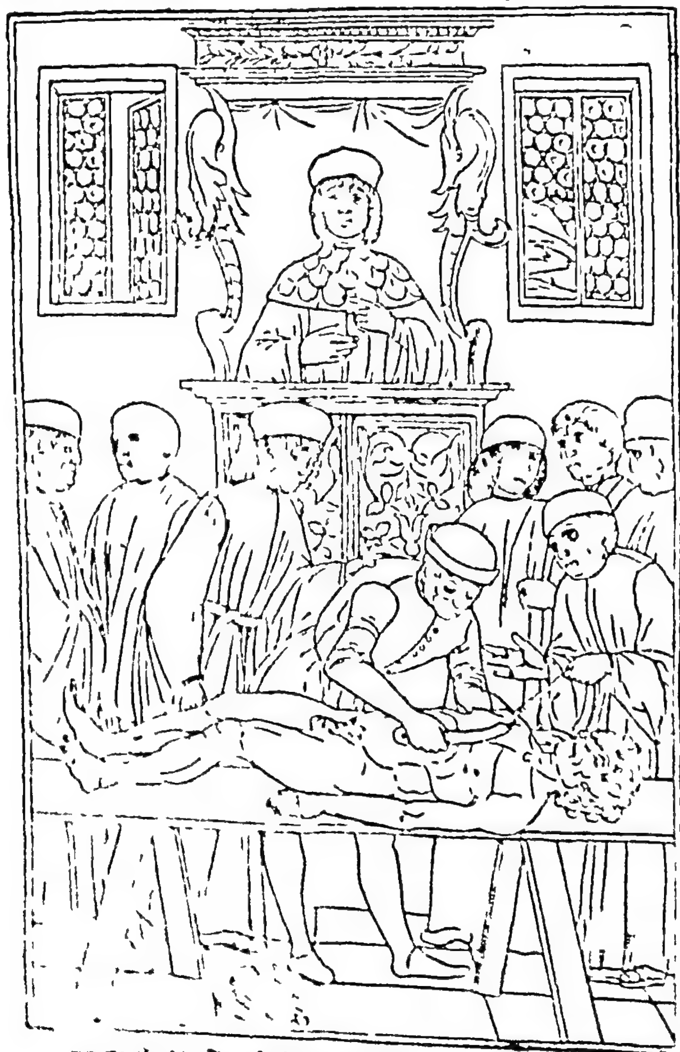
धुन थी। कॉपर्निकस का अधिकांश समय उन्ही के साथ गुजरता और वह विभिन्न विषयो पर विचार-विमर्श करते थे।

उस समय चिकित्सा-शास्त्र और खगोल-शास्त्र को अलग-अलग नही समझा जाता था। लोग यह समझते थे कि शरीर के प्रत्येक अंग का किसी न किसी ग्रह या नक्षत्र से सीधा सम्बंध है। नक्षत्रो की जो भी चाल होगी उसका प्रभाव विभिन्न अंगो पर पड़ेगा। उदाहरणार्थ, दाहिनी आंख का सम्बध सूर्य से और बायी आंख का चन्द्रमा से माना जाता था। इसीलिए दवा-इलाज के नाम पर झाड़-फूक भी चलती थी। यह काम बड़े-बड़े विद्वान भी करते थे। कुछ लोग जो कम अन्धविश्वासी थे, झाड़-फूक तो नही कराते थे, लेकिन नक्षत्रों की चाल और तिथि आदि देख कर, शकुन विचार कर, विभिन्न रोगों की दवा लेते थे।

कॉपर्निकस को इस बात की छानबीन करने का शौक पैदा हुआ कि क्या सचमुच नक्षत्रों और शारीरिक अंगों में कोई सम्बंध है ? इसी उद्देश्य से वह चिकित्सा-शास्त्र व खगोल-शास्त्र की पुरानी किताबो को उलटता-पलटता और प्रोफेसरों से बहसें करता रहा।

इसके अलावा उसने यूनानी भाषा सीखनी भी

शुरू कर दी। इससे लाभ यह था कि बहुत से ऐसे प्राचीन ग्रंथ जिन्हें अन्धविश्वासियों ने लुप्त कर दिया



पडुआ में १५वीं सदी में शल्य-चिकित्सा की एक कक्षा।

था, अब उसे पढ़ने को मिल सकते थे।

धीरे-धीरे कॉपर्निकस को पदुआ में रहते-रहते ५ वर्ष बीत गये।

उधर एर्मलान्द में पादरी मामा बूढे हो चले थे। पास-पड़ोस के राजाओ से अपना बचाव करने के अलावा उन्हें स्वय अपने देश के पादरियो की जोड-तोड का सामना भी करना पड रहा था। रोज यही डर लगा रहता कि पादरी मिल कर कही उनके राज्य का खात्मा न कर दे। इतने वर्षों तक वह निकोला को किसी न किसी बहाने से विदेशो मे अध्ययन करने का मौका दिलाते रहे थे, लेकिन अब कॉपर्निकस को छुट्टी दिलाना उनके लिए भी असम्भव हो गया था। वह उसको अपने पास ही रखना चाहते थे ताकि अपने बाद उसे राज्य का अधिकारी बना सके।

सन् १५०६ मे कॉपर्निकस को पदुआ से वापस बुला लिया गया। उसकी पढाई खत्म हो गयी।

एर्मलान्द का धार्मिक किला। इसी में वह अपने मामा के साथ रहने लगा। दूसरे राजाओ से बातचीत करनी हो या राज्य का प्रबन्ध करना हो, बिना कॉपर्निकस की सहायता काम नही चलता था।

लघु-टिप्पणी

दिन बीतते रहे।

पादरी राजा लूकस वात्सलरोद के राजमहल की चहल-पहल में भी कॉपर्निकस अपने अध्ययन के लिए समय निकाल ही लेता। यहाँ भी नित्य रात के समय तारों की चाल देखने तथा प्राचीन ग्रन्थों से उनके बारे में हिसाब लगाने का कार्यक्रम चलता रहा। अब उसके मन में नये-नये विचार उठने लगे। बहुत सी बातों पर, जो विद्वानों को असंगत लगती थी और जिनका भेद वे समझ नहीं पाते थे, उन पर उसने सोचना शुरू किया। थोड़े ही समय में उसने अपनी प्रथम पुस्तक लिख डाली।

पुस्तक का नाम था 'लघु-टिप्पणी'।

लघु-टिप्पणी में कॉपर्निकस ने पहली बार इन बातों पर विचार किया कि ऋतु-परिवर्तन क्यों होते हैं? कभी कड़ाके का जाड़ा पड़ता है तो कभी चटाखे की धूप क्यों निकलती है? कभी चारों ओर हरियाली ही हरियाली दिखाई देती है तो कभी पेड़-पौधों के पत्ते

पीले हो कर हवा में क्यों उड़ने लगते है ? दिन क्यों छोटे-बड़े होते है ? कभी चाद का महीना २९ दिन का होता है तो कभी ३० दिन का क्यों ?

अधिकांश लोगों का विश्वास था कि किसी दैवी शक्ति ने सृष्टि की रचना करके उसका परिपालन अपने हाथ मे ले लिया है। वही शक्ति अपनी मर्जी के अनुसार यह सब परिवर्तन करती रहती है। उसने पृथ्वी को सृष्टि का केन्द्र बना दिया है और सभी ग्रह नक्षत्र पृथ्वी के चारों ओर इस प्रकार घूमते है कि पृथ्वी से उनकी दूरी घटती-बढ़ती नही है।

तुम जानते हो कि तेली का बैल इस तरह चलता है कि उसके पैरों की दूरी कोल्हू के केन्द्र से सदा बराबर रहती है। उसका रास्ता एक साधारण वृत्त होता है। तो पुराने विद्वान यह समझते थे कि चन्द्र, सूर्य व दूसरे ग्रह, पृथ्वी के चारों ओर वृत्त के रास्ते पर घूमते रहते है।

'लघु-टिप्पणी' मे कॉपर्निकस ने प्रश्न उठाया कि यदि सूर्य पृथ्वी के चारों ओर वृत्ताकार मार्ग पर परिक्रमा करता है तो, दूरी एक ही रहने के कारण, दिन-रात सदैव एक समान होने चाहिए, परन्तु जाडे मे दिन छोटे व गर्मी में बड़े क्यों होते है ? इसलिए, हो-न-हो,

ऋतु-परिवर्त्तन के साथ-साथ पृथ्वी व सूर्य के बीच की दूरी भी घटती-बढ़ती होगी। अतः नक्षत्रों का पथ सम्भवत वृत्ताकार नही वरन दीर्घ वृत्ताकार हो सकता है।

'लघु-टिप्पणी' कॉपर्निकस ने कब लिखनी प्रारम्भ की और कब समाप्त की यह तो पता नही, परन्तु यह जरूर मालूम है कि सन् १५१२ में उसकी पाण्डुलिपि कॉपर्निकस के एक मित्र के पास थी। उस समय किताबें लिखना बहुत कठिन काम होता था। वर्षों के परिश्रम के बाद एक प्रतिलिपि तैयार होती थी क्योकि छापेखानो का आविष्कार तब तक नही हुआ था। कॉपर्निकस के एक मित्र ने इस पुस्तक की एक प्रतिलिपि अपने पास रख ली थी।

धीरे-धीरे कॉपर्निकस को पादरी मामा के साथ राजमहल मे रहते-रहते ६ वर्ष हो गये। २९ मार्च १५१२ ई को एक यात्रा से लौटते समय लूकस वाल्सरोद का देहान्त हो गया। कॉपर्निकस का एक ऐसा सहारा उठ गया, जिसने उसको उच्चतम शिक्षा प्राप्त कराई थी और पचास तरह के बहानो ने उसे गिरजाघर के झमेलो से छुट्टी दिला कर पढाई और खोज का अवसर दिया था।

धर्मराज-महल में

मामा की मृत्यु के बाद कॉपर्निकस को मजबूर होकर पादरी का पद सम्भालना पडा। एर्मलान्द का महल उससे सदा के लिए छूट गया। अब उसे कोई ४० मील उत्तर-पश्चिम की ओर फ्राउएनवर्ग का बडा पादरी बना कर भेज दिया गया। यह भी बडा सुन्दर स्थान था। चारो ओर हरियाली। एक ओर किलकारिया भरती हुई नदी।

यहा उसे दूसरे पादरियो के साथ रहना और काम करना था। शायद तुम समझते होगे कि पादरी लोग परलोक मे ऐश्वर्य का आनन्द उठाने की प्रतीक्षा मे इस संसार में त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत करते रहे होगे। परन्तु बात ऐसी नही थी। वे दूसरी दुनिया में राहतों का इन्तजार नही कर सकते थे। इसी ससार के सुख और आनन्द लूटने मे उन्हे कोई सकोच नही था।

प्रदेश की एक-तिहाई भूमि का मालिक तो स्वय सबसे बडा पारदी—'विशप'—था। एक-तिहाई भूमि

उनसे छोटे पादरी, जो कैनन कहलाते थे, आपस मे बाटे हुए थे। जो कुछ जमीन बाकी बची, उस पर छुटभैये पादरी अपना हाथ साफ कर देते थे। धर्म-महल के पास-पडोस की जमीन छोटे-छोटे पादरियो की ही मिल्कियत होती थी।

पादरियों को प्रण करना पडता था कि वे शादी-ब्याह नही करेगे और सासारिक बधनो से अपने को मुक्त रखेगे। किन्तु अधिकाश पादरी यह शपथ लेने के लिए तैयार नही होते थे। शादी-ब्याह भी उनके ऐसे वर्ग मे होते थे जिनमें कुछ लोग ऊचे-ऊचे सरकारी अफसर होते थे और कुछ पादरी।

इन्ही सब बातो का नतीजा यह कि प्रत्येक धर्म-महल व गिरजाघर मे पादरी तो होते थे ढेरो, पर पूजा करने वाला कोई नही मिलता था।

कॉपर्निकस को ये सब बाते पसन्द नही थी। उसने अपने रहने के लिए धर्मराज-महल के बिल्कुल बाहरी हिस्से मे बडी दीवार से मिला हुआ एक कमरा पसन्द किया—हालाकि यह जगह बहुत छोटे पादरियों के रहने की थी।

पर कमरा बहुत ऊचाई पर था। यहा रह कर उसे आकाश के तारो का अवलोकन करने मे बडी

सुविधा होती थी ।

दूसरे पादरी तो माया और परलोक दोनों मे मजे लूट रहे थे, लेकिन कॉपर्निकस अपने अध्ययन, अवलोकन और चितन मैं मग्न था । कभी-कभी उसे काम से इधर-उधर जाना भी पड़ता । किन्तु अपना अधिकतर समय वह तारो की चाल देखने मैं बिताता ।

उसकी दूसरे पादरियों से नही बनती थी, केवल साहब-सलामत थी । वैसे उसका भाई ऐण्ड्रयू वही था । उससे उसका थोड़ा बहुत मन बहलता था । लेकिन जल्द ही ऐण्ड्रयू को कोढ़ की बीमारी हो गयी और वह मर गया । कॉपर्निकस बिल्कुल अकेला रह गया । दूसरे पादरी उससे डरते और जलते थे ।

समस्या यह थी कि लूकस वात्सलरोद का उत्तराधिकारी किसको बनाया जाय । पादरियो ने सर्व-सम्मति से ६ उम्मीदवारो की एक सूची बनायी । इसमे पहला नाम कॉपर्निकस का था ।

लेकिन पोलैण्ड के राजा ने अपने एक खास आदमी को पादरी-राजा बना कर भेज दिया । उसने कहलवाया कि अगर जगह खाली हुई तो कॉपर्निकस को पादरी-राजा बनाया जायेगा । लेकिन जगह कभी खाली नहीं हुई; कॉपर्निकस कभी पादरी-राजा नही बन सका ।

तारे देखें घूर के !

तुमने कभी पटरी के किनारे खडे होकर रेल को देखा है ? अगर कुछ देर तक खड़े देखते रहो तो ऐसा मालूम होगा जैसे रेल वहुत दूर जाकर कही ठहर गयी हो और एक छोटी-सी, काली-काली, दियासलाई की डिबिया वन गयी हो ।

लेकिन दूरबीन से देखो तो पता चलता है कि न तो गाडी छोटी हुई है, न ही उसकी चाल कम हुई है । यह भ्रम दूरी के कारण पैदा होता है ।

फिर नक्षत्र और तारे तो हमारी पृथ्वी से वहुत दूर है । तुमने रात को ९ या १० बजे एक वडा चमकदार तारा देखा होगा । कभी वहुत सवेरे रात के पिछले पहर मे भी उसी तारे को खूब चमकता देखा होगा । देखने मे ऐसा लगता है जैसे आसमान मे कोई बिजली का लट्टू लगा हो । जानते हो, वह कितना वडा है ? इसका घेरा हमारी पृथ्वी के घेरे का तीन-चौथाई है ।

तुम पूछोगे, तब यह इतना छोटा क्यो लगता है ? बात यह है कि यह हमारी पृथ्वी से वहुत, वहुत,

सुविधा होती थी।

दूसरे पादरी तो माया और परलोक दोनो में मजे लूट रहे थे, लेकिन कॉपर्निकस अपने अध्ययन, अवलोकन और चिंतन में मग्न था। कभी-कभी उसे काम से इधर-उधर जाना भी पडता। किन्तु अपना अधिकतर समय वह तारो की चाल देखने में बिताता।

उसकी दूसरे पादरियों से नही बनती थी, केवल साहब-सलामत थी। वैसे उसका भाई ऐण्ड्रयू वही था। उससे उसका थोडा बहुत मन बहलता था। लेकिन जल्द ही ऐण्ड्रयू को कोढ की बीमारी हो गयी और वह मर गया। कॉपर्निकस बिल्कुल अकेला रह गया। दूसरे पादरी उससे डरते और जलते थे।

समस्या यह थी कि लूकस वातसलरोद का उत्तराधिकारी किसको बनाया जाय। पादरियो ने सर्व-सम्मति से ६ उम्मीदवारो की एक सूची बनायी। इसमे पहला नाम कॉपर्निकस का था।

लेकिन पोलैण्ड के राजा ने अपने एक खास आदमी को पादरी-राजा बना कर भेज दिया। उसने कहलवाया कि अगर जगह खाली हुई तो कॉपर्निकस को पादरी-राजा बनाया जायेगा। लेकिन जगह कभी खाली नहीं हुई; कॉपर्निकस कभी पादरी-राजा नहीं बन सका।

तारे देखें घूर के !

तुमने कभी पटरी के किनारे खड़े होकर रेल को देखा है ? अगर कुछ देर तक खड़े देखते रहो तो ऐसा मालूम होगा जैसे रेल बहुत दूर जाकर कहीं ठहर गयी हो और एक छोटी-सी, काली-काली, दिया-सलाई की डिब्रिया बन गयी हो ।

लेकिन दूरबीन से देखो तो पता चलता है कि न तो गाड़ी छोटी हुई है, न ही उसकी चाल कम हुई है । यह भ्रम दूरी के कारण पैदा होता है ।

फिर नक्षत्र और तारे तो हमारी पृथ्वी से बहुत दूर है । तुमने रात को ९ या १० बजे एक बडा चमकदार तारा देखा होगा । कभी बहुत सबेरे रात के पिछले पहर में भी उसी तारे को खूब चमकता देखा होगा । देखने में ऐसा लगता है जैसे आसमान में कोई बिजली का बल्ब लगा हो । जानते हो, वह कितना बड़ा है ? उसका घेरा हमारी पृथ्वी के घेरे का तीन-चौथाई है ।

तुम पूछोगे, तब वह इतना छोटा क्यों लगता है ?

बात यह है कि वह हमारी पृथ्वी से बहुत, बहुत,

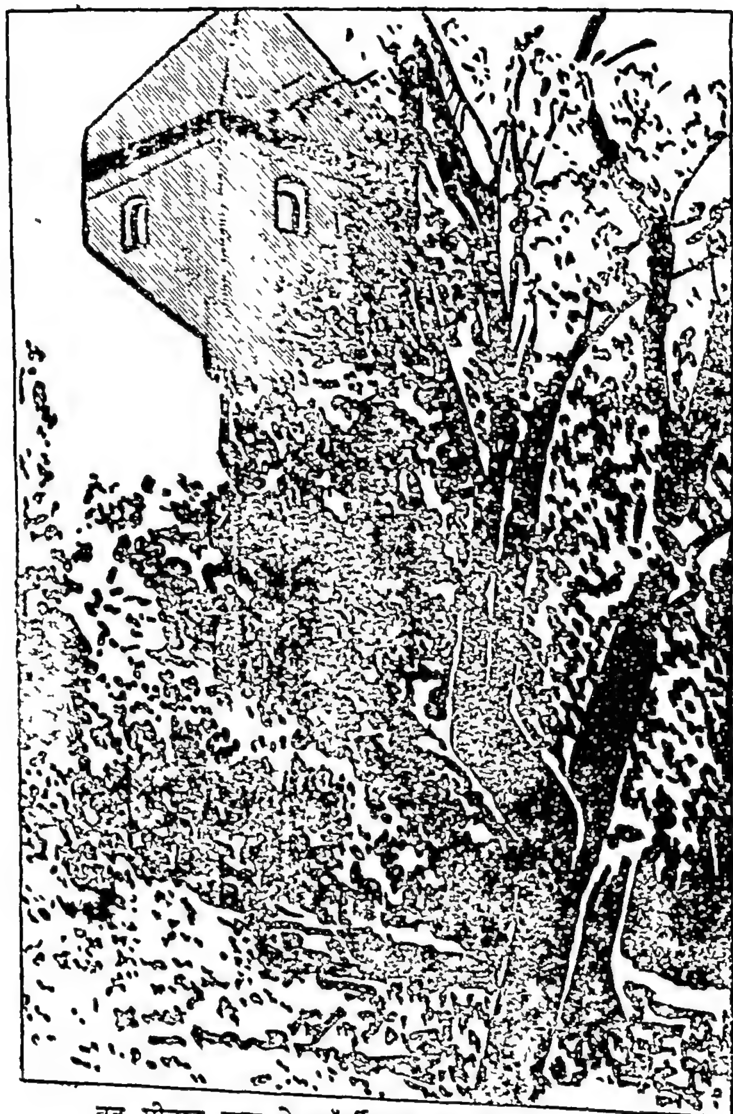
बहुत दूर है। इतनी दूर कि अगर कोई सीधी रेल की पटरी पृथ्वी से उस तारे—शुक्र—तक बिछायी जाय और उस पर १०० मील प्रति घंटे की रफ्तार से कोई रेल दिन-रात चलती रहे तो २८ वर्षों मे शुक्र तक पहुंच सकेगी।

इन वृहत् तारों और ग्रहो की चाल और उसके स्थान का पता लगाना कोई आसान काम नही था। फिर भी, सैकडों-हजारों वर्षों से विद्वान और पुरोहित इन तारो को घूर-घूर कर आखो से देखते आये थे और छोटे-मोटे भद्दे यन्त्र बना कर इस काम को पूरा किया करते थे।

प्राचीन काल मे अरबों और यूनानियो ने बडी मेहनत से जो अवलोकन किये थे, उनका वर्णन पुराने ग्रन्थों मे किया गया था। उनमे बहुत सी त्रुटिया भी थी।

कापर्निकस ने इन ग्रन्थो को पूरी तरह "चाट डाला।" सभी गलत-सही बातो को सही मान कर उसने हिसाब लगाना शुरु किया। नतीजा यह कि उसे हिसाब में बहुत सी गलतिया मिलने लगी।

अवलोकन के लिए उसने एक दो भद्दे किस्म के यत्र भी बनाये। राज-काज से जहा फुर्सत मिली,



वह मीनार जहा से कॉर्पानिकस नक्षत्रो का अवलोकन करते थे ।

कॉपर्निकस अपने इन्ही भोड़े यन्त्रों की सहायता से बड़े कठिन कार्य करता रहता। उसने २७ सफल अवलोकन किये।

चन्द्रग्रहण एवं सूर्यग्रहण खगोल शास्त्रियो के लिए बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। इन अवसरों पर विभिन्न नक्षत्रो के स्थान देखने का बडा अच्छा मौका होता था। कॉपर्निकस ने तमाम ग्रहणो का पूरा-पूरा लाभ उठाया और बड़े महत्वपूर्ण नतीजे निकाले।

उसके अवलोकन मे खास बात यह थी कि किसी प्रकार की सुविधा न होते हुए भी नगी आखों से तारो को घूर-घूर कर देखना और महत्वपूर्ण नतीजे निकालना होता था। इन्ही अवलोकनो के आधार पर बाद मे उसने अपने सिद्धात को जन्म दिया।

आज सदियो बाद जब बड़ी-बडी दूरबीनो और शक्तिशाली यन्त्रो का आविष्कार हो चुका है तब भी ये सिद्धात सही साबित हुए है।

पत्रा-तिथि-मिति

सन् १५१४ !

इटली के रोम नगर में बड़ी चहल-पहल है। दूर-दूर के देशों से बड़े-बड़े विद्वान आये हुए हैं। हर जगह दर्शको का मेला-सा लगा है।

यह सम्मेलन ईसाई धर्म के 'लाट पादरी' पोप लियो दशम ने संयोजित किया है। सम्मेलन में इस वात पर दिमाग लडाया जा रहा है कि साल में ठीक-ठीक कितने दिन होते है ? पत्रा किस नियम पर बनाया जाय कि हर साल त्योहारों और धार्मिक पर्वों की ठीक-ठीक तिथि निश्चित की जा सके ?

अभी तक तारीख गिनने का हिसाब लगभग १६०० वर्षों से नही वदला गया था। महात्मा ईसा के जन्म से कोई १०० वर्ष पहले रोम के सम्राट जूलियस सीजर के जमाने मैं यह निश्चय किया गया था कि साल में ३६५ दिन माने जायेगे और हर चौथे साल फरवरी के महीने में एक दिन वढ़ा दिया जायेगा। तिथि की गणना इसी नियम के अनुसार होती चली

आई थी।

लेकिन तुम जानते हो कि साल ठीक ३६५ दिन का नही होता।

इस प्रकार हर १२८ वर्ष बाद सचमुच एक दिन का अन्तर हो जाता था। धीरे-धीरे वास्तव में १० दिन का अन्तर पड़ गया था। पुरोहितो में त्योहारो और पूजा की तिथियो के बारे मे बडी-बडी बहसे होती थी। कभी-कभी एक ही त्योहार एक पुरोहित को मानने वाले एक दिन मनाते थे, तो दूसरे पुरोहित को मानने वाले दूसरे दिन।

इसी गडबडी को ठीक करने के लिए पोप लियो ने यह सम्मेलन बुलाया था। कॉपर्निकस को इस सम्मेलन मे विशेष रूप से आमन्त्रित किया गया था। लोगो का विचार था कि इस विषय में जितनी जानकारी कॉपर्निकस को है उतनी किसी दूसरे को नही।

लेकिन कॉपर्निकस ने इस सम्मेलन मे भाग लेने से इनकार कर दिया।

उसने कहला भेजा—अभी तो यही बात निश्चित नहीं है कि पृथ्वी अपने स्थान पर स्थिर है अथवा वह सूर्य के चारों ओर घूमती है। इसलिए तिथि-मिति, ऋतु-परिवर्तन आदि के सम्बन्ध मे कोई बात निश्चि

रूप से कहना सम्भव नहीं है। जब तक मै इन प्रश्नों को अच्छी तरह हल नही कर लेता, तब तक इस सम्मेलन में भाग लेना मेरे लिए व्यर्थ होगा।

सचमुच हुआ वही जो कॉपर्निकस ने कहा था। बड़े-बड़े विद्वान, खगोल-शास्त्री और पादरी आस्तीने चढा-चढा कर बहसे करते रहे। मोटे-मोटे ग्रंथों मे से श्लोक पढ़-पढ कर वे एक दूसरे को परास्त करने का प्रयत्न करते रहे। लेकिन नतीजा कुछ भी नही निकला। पूरे ७८ वर्ष बाद, जब कॉपर्निकस ने इन मौलिक समस्याओं का समाधान खोज लिया तभी सन् १५८२ में पोप-ग्रिगरी की कोशिशों से कुछ सुधार हो सका। पोप ग्रिगरी ने हुक्म दिया कि सन् १५८२ के साल के १० दिन काट दिये जाये और उसके बाद हर तीन-तीन सौ वर्ष बाद फरवरी का एक-एक दिन कम कर दिया जाये, तब कही जाकर पत्रे का हिसाब ठीक हो सकेगा।

अब तो सारी दुनिया इसी पत्रे पर चलती है। लेकिन उस जमाने मे लोग बड़ी कठिनाई से इसे मानने पर तैयार हुए थे। इगलैण्ड वालों ने तो कोई १५० वर्ष तक इस नियम को स्वीकार ही नही किया। और, रूस वाले तो सन् १९१७ तक इस पत्रे को मानते ही न थे।

युद्ध और खोटा सिक्का

सन् १५१९ में एर्मलान्द और आसपास के इलाको में लड़ाई की आग फैल गयी। लडाई ५ साल तक चलती रही।

युद्ध हमेशा से बुरी चीज रहा है। इसमे सदैव ही साधारण जनता सबसे ज्यादा तबाह हुई है। कॉपर्निकस के जमाने मे ऐटम-बम और दूसरे भयकर विनाशकारी अस्त्रो का आविष्कार नही हुआ था। लेकिन किसानो और निहत्थे शहरियो का घर फूकने और उनका धन लूटने मे किसी को संकोच नही होता था। एक तरफ पोलैण्ड के राजा की सेना और दूसरी ओर पादरी-दल के लुटेरे। एक दूसरे के विरुद्ध लडने के बहाने गाव के गाव जलाये जा रहे थे। लोग घर-बार छोड-छोड़ कर जान बचाने के लिए दूर-दूर के देशो मे भाग रहे थे। जो लोग बच गये थे वे फसले नष्ट हो जाने के कारण भूखो मर रहे थे। चारो ओर त्राहि-त्राहि मची थी।

कॉपर्निकस को इन ६ वर्षों मे हर तरह के काम करने पडे। कही सुलह की बातचीत के लिए शत्रुओ

के पास जाना। कहीं जले हुए गांवों में खाने-पीने का सामान पहुँचवाने के लिए दौड़ना। कही फिर से झोपड़ियां डाल कर घर बसाने में लोगों की सहायता करना। दिन-रात का काम। उसे दम लेने तक की फुर्सत नही मिलती थी।


निकोला कॉपर्निकस का एक पुराना चित्र।

लेकिन इसी के साथ उसका आकाश-अवलोकन और नक्षत्रो की चाल देखना पहले की तरह जारी रहा। अपने सिद्धांतो को प्रकाशित करने के लिए उसने एक ग्रंथ लिखना भी शुरू कर दिया।

युद्ध ने एर्मलान्द के निवासियो पर एक और मुसीबत लाद दी थी। कौन - सी मुसीबत ? महगाई की मुसीबत। रोजमर्रा के इस्तेमाल की चीजों के दाम आसमान छू रहे थे।

डर के मारे लोग सोना-चादी छिपा रहे थे। सिक्को मे कुछ चादी होती थी। व्यापारी सिक्को को गला कर चादी निकाल रहे थे और उसे अपने पास दबा रहे थे। उन्हे यह खयाल था कि जब चीजे और ज्यादा महगी हो जायेगी तो यह छिपा हुआ सोना-चादी निकाल कर वे खूब मुनाफा कमायेगे। दूसरी तरफ नये सिक्को मे सोने-चादी की मात्रा बहुत कम होने से सिक्को का दाम बहुत घट गया था। नतीजा यह कि जिस चीज के लिए पहले एक सिक्के की जरूरत पड़ती थी, अब उसके लिए आठ सिक्के भी काफी नही थे।

कॉपर्निकस ने इस रोग के निदान का उपाय खोज निकाला। उसने एक रिपोर्ट तैयार की जिसमे बहुत से ऐसे सुझाव थे कि जिन पर यदि सरकार अमल करती तो जनता को बड़ी राहत मिलती। रिपोर्ट मे सरकार की अदूरदर्शिता की कटु आलोचना की गयी थी।

उसमे कहा गया था कि कीमती सिक्के गायब करके घटिया मूल्य के सिक्के ढालने वाली सरकार की हालत उस मूर्ख किसान जैसी है, जो केवल सस्ता होने की वजह से मरियल बीज अपने खेत मे बोता है। इससे फसल तो चौपट होती ही है, खेत भी नष्ट हो जाता है।

धर्म के अन्धे

अन्धे दो प्रकार के होते है : एक तो वे जिनकी आंखें प्रकृति ने छीन ली है पर जो अपने दिमाग की आखों से देखने की कोशिश करते है; दूसरे वे जिनके आखे तो दोनों होती है, किन्तु जिन्हे कुछ सुझाई नही देता और जब कभी वे कुछ देखते भी है तो उन्हे अपने अलावा कोई दूसरी चीज नही दिखायी देती।

वे समझते हैं कि सारी सृष्टि में अगर कोई चीज उत्तम है तो या तो वे स्वयं या उनसे सम्बंध रखने वाली चीजे। उनको अपने धर्म, रहन-सहन, बोली, भापा और अपने आचार-विचार के अतिरिक्त संसार की हर वात गलत मालूम होती है। वे समझते है कि जो कोई उनसे पूरी तरह सहमत नही उसको इस ससार में रहने का कोई अधिकार नही।

इसी दूसरी किस्म के अन्धों में धर्म के अन्धे भी होते है। वे अपने धर्म और सम्प्रदाय को सर्वश्रेष्ठ ही नही, वल्कि एक मात्र सत्य मानते है। दूसरे धर्मों और विचारो को जबर्दस्ती दुनिया से मिटाना अपना कर्तव्य

समझते है। धर्म तो मनुष्य को मनुष्यता का सन्देश देता है। लेकिन देखो तो उसी के बहाने मानवता का कैसा खून किया जाता है!

कॉपर्निकस के जमाने में भी धर्म के अन्धो और सम्प्रदायवादियो का बड़ा जोर था। ईसाई धर्म के बड़े-बड़े मठाधीश जीवन के प्रत्येक अग मे अपना आधिपत्य जमाये बैठे थे। धर्म को उन्होने अपने नातेदारो-रिश्तेदारो, मित्रो और लग्गू-भग्गू लोगो के आनन्द ओर विलास का साधन बना रखा था। कोई भी व्यक्ति यदि कोई ऐसी बात कहता जिससे इन मठाधीशो को जरा भी खतरा मालूम हो, तो वे झट उस आदमी को विधर्मी की उपाधि दे देते। तरह-तरह की यातनाये देकर वे उसकी जबान बन्द करा देते।

तो भी कुछ ऐसे निडर व्यक्ति थे जो समाज और धर्म मे सुधार के लिए पूरा जोर लगा रहे थे। उन्होंने आम लोगो को अपनी ओर आकर्षित कर एक पूरा आन्दोलन-सा खड़ा कर दिया था। इसे 'धर्म सुधार आन्दोलन' या 'रिफार्मेशन' कहा जाता था। इस आन्दोलन के जन्मदाताओ मे एक जर्मन पादरी थे जिनका नाम था—मार्टिन लूथर। लूथर के व्याख्यानो का किसानो और आम गरीब जनता पर बड़ा प्रभाव

पड़ता था। बड़ी से बड़ी संख्या में आकर्षित होकर वे लूथर के दल में शामिल होते जा रहे थे। इस दल के लोगों को 'प्रोटेस्टेंट' कहा जाता था, जिसका अर्थ है 'विरोधपक्षी'। पुराने मत को मानने वाले अपने को 'कैथोलिक' कहते थे।

लेकिन राज्य और धर्म की बागडोर तो कैथोलिकों के हाथ में थी। एक तरफ पादरी लोग जरा-जरा सी बात पर प्रोटेस्टेंटों के लिए कुफ्र का फतवा देकर उन्हें धर्म से बाहर कर देते, जिसकी वजह से कोई भी आदमी उनसे मिलने-जुलने की हिम्मत नही करता था। दूसरी ओर पोलैण्ड का राजा प्रोटेस्टेंटो को केवल धर्म के अपराध में मौत के घाट उतार रहा था। अकेले दांजिग नगर में कई हजार प्रोटेस्टेंटों को, जिनमें अधिकतर किसान और छोटे-मोटे दस्तकार थे, जिन्दा जला दिया गया था। कॉपर्निकस पादरी तो कैथोलिक मत का था, किन्तु उसे धर्मान्धता बिलकुल नापसन्द थी। उसका अफसर, एर्मलान्द का पादरी-राजा, कट्टर प्रोटेस्टेंट-विरोधी था। कोई प्रोटेस्टेंट उसे फूटी आखों नही सोहाता था। उसे यह भी गवारा नही था कि उसका कोई पादरी किसी प्रोटेस्टेंट से बातचीत करे।

लेकिन कॉपर्निकस को इस बात की रत्ती भर परवाह नही थी। वह यह कहता था कि धर्म के ये अन्धे पशुओ से भी बदतर हो गये है, और अब तो मानवता के ही लुप्त हो जाने का डर है। उसके सबसे अच्छे मित्रो में प्रोटेस्टेट भी शामिल थे। उसका एक सबसे बड़ा सहयोगी जिसका नाम जार्ज जोएसिम था, स्वय वितेनबर्ग के प्रोटेस्टेट विश्वविद्यालय मे गणित का प्रोफेसर था। सच पूछो तो, यह मित्र न होता तो शायद कॉपर्निकस के सिद्धान्त दुनिया के सामने कभी आ ही नही पाते।

कांपर्निकस के इन्ही विचारो का नतीजा यह हुआ कि उसके साथ के सारे पादरी एक-एक करके उससे अलग होते गये। उससे बात करने के लिए भी कोई नही आता था। किन्तु वह इतना बड़ा विद्वान था कि खुले शब्दो मे उसका विरोध करने और उसके विचारो की निन्दा करने का साहस कैथोलिक पादरियो को नही होता था। पीठ पीछे, बेशक, छोटे से लेकर बड़े पादरी तक उसकी बुराई किया करते थे।

एक तरह से यह बात कांपर्निकस के लिए ही नही, समस्त मानवता के लिए बड़े लाभ की साबित हुई। कांपर्निकस अब पुरोहिती जंजाल से काफी दूर था।

मुक्त रहने लगा। अपना सारा समय वह अध्ययन, चिंतन और मनन में बिताने लगा।

तुम शायद सोचते होगे कि कैथोलिक चूंकि कॉपर्निकस के बहुत सख्त खिलाफ थे इसलिए प्रोटेस्टेंट उसके सिद्धांतों का समर्थन करते होंगे क्योंकि वे अपने को आधुनिक विचार वाला सुधारपंथी कहते थे। लेकिन बात ऐसी नही थी।

कैथोलिकों को तो खुले शब्दों में कॉपर्निकस की निंदा करने का साहस नही हुआ, किन्तु प्रोटेस्टेंट मत के नेता मानो यह अपना धर्म समझने लगे थे कि जहां वे धार्मिक कुरीतियों के विरोध में आवाज उठायें वहां कॉपर्निकस के सिद्धांतों की भी कड़े से कड़े शब्दों में निंदा करे। छुटभैयों की तो बात ही क्या, स्वय मार्टिन लूथर अपने हर व्याख्यान में यह कहना नही भूलते थे कि कॉपर्निकस ने विज्ञान, धर्म और प्रकृति के नियमों को बिलकुल उलट दिया है और कहता है कि पृथ्वी स्थिर नही है बल्कि सूर्य के चारों ओर घूमती है!

लेकिन कॉपर्निकस के मन में इन निन्दकों के विरुद्ध कभी कटुता नही उत्पन्न हुई। वह जानता था कि धर्म के ये अन्धे इस समय तो कुछ नही देख पा रहे, किन्तु भविष्य मे मानवता और सत्य की जीत अवश्य होगी।

लेकिन कॉपर्निकस को इस बात की रत्ती भर परवाह नही थी। वह यह कहता था कि धर्म के ये अन्धे पशुओ से भी बदतर हो गये है, और अब तो मानवता के ही लुप्त हो जाने का डर है। उसके सबसे अच्छे मित्रों में प्रोटेस्टेट भी शामिल थे। उसका एक सबसे बड़ा सहयोगी जिसका नाम जार्ज जोएसिम था, स्वय वितेनबर्ग के प्रोटेस्टेट विश्वविद्यालय में गणित का प्रोफेसर था। सच पूछो तो, यह मित्र न होता तो शायद कॉपर्निकस के सिद्धान्त दुनिया के सामने कभी आ ही नही पाते।

कॉपर्निकस के इन्ही विचारो का नतीजा यह हुआ कि उसके साथ के सारे पादरी एक-एक करके उससे अलग होते गये। उससे बात करने के लिए भी कोई नही आता था। किन्तु वह इतना बडा विद्वान था कि खुले शब्दों में उसका विरोध करने और उसके विचारों की निन्दा करने का साहस कैथोलिक पादरियो को नही होता था। पीठ पीछे, बेशक, छोटे से लेकर बड़े पादरी तक उसकी बुराई किया करते थे।

एक तरह से यह बात कॉपर्निकस के लिए ही नही, समस्त मानवता के लिए बड़े लाभ की साबित हुई। कॉपर्निकस अब पुरोहिती जजाल से काफी हद तक

मुक्त रहने लगा। अपना सारा समय वह अध्ययन, चिंतन और मनन में बिताने लगा।

तुम शायद सोचते होगे कि कैथोलिक चूंकि कॉपर्निकस के बहुत सख्त खिलाफ थे इसलिए प्रोटेस्टेंट उसके सिद्धांतों का समर्थन करते होंगे क्योंकि वे अपने को आधुनिक विचार वाला सुधारपंथी कहते थे। लेकिन बात ऐसी नही थी।

कैथोलिकों को तो खुले शब्दों मे कॉपर्निकस की निंदा करने का साहस नही हुआ, किन्तु प्रोटेस्टेंट मत के नेता मानो यह अपना धर्म समझने लगे थे कि जहां वे धार्मिक कुरीतियों के विरोध में आवाज उठाये वहां कॉपर्निकस के सिद्धातों की भी कड़े से कड़े शब्दों में निंदा करे। छुटभैयों की तो बात ही क्या, स्वय मार्टिन लूथर अपने हर व्याख्यान मे यह कहना नही भूलते थे कि कॉपर्निकस ने विज्ञान, धर्म और प्रकृति के नियमों को बिलकुल उलट दिया है और कहता है कि पृथ्वी स्थिर नही है बल्कि सूर्य के चारों ओर घूमती है!

लेकिन कॉपर्निकस के मन में इन निन्दकों के विरुद्ध कभी कटुता नही उत्पन्न हुई। वह जानता था कि धर्म के ये अन्धे इस समय तो कुछ नही देख पा रहे, किन्तु भविष्य मे मानवता और सत्य की जीत अवश्य होगी।

छः पुस्तकें

कॉपर्निकस के जीवन भर की कमाई उसकी एक पुस्तक थी जिसे लिख कर उसने कोई तीस वर्ष से छिपा रखा था। इस ग्रन्थ में उसने अपने अध्ययन और अवलोकन के आधार पर सूर्य, पृथ्वी, नक्षत्र और तारों की चाल से सम्बन्धित सिद्धांत प्रतिपादित किये थे।

उसे जब भी मौका मिलता वह नये प्रयोगों के आधार पर अपने सिद्धांतों में संशोधन करता रहता। किन्तु उस ग्रन्थ को प्रकाशित करने में वह सदैव सकोच ही करता रहा। कुछ खास-खास लोगो से इस विषय में जब बातचीत होती तभी लोगों को उसके सिद्धातो का पता चलता। और इतने ही मे पचास तरह की बातें कही जाने लगती थी। इस कारण कॉपर्निकस अपने ग्रंथ की पूरी पांडुलिपि किसी को दिखाने के लिए तैयार नही होता था।

धीरे-धीरे तीस वर्ष बीत गये। यकायक सन् १५३९ मे एक प्रोटेस्टेट गणितज्ञ जार्ज जोएसिम (जिनका उपनाम 'रेटिकस' था) कॉपर्निकस से मिलने

आया। उस जमाने में किसी प्रोटेस्टेंट का कॉपर्निकस से मिलना बड़ी हिम्मत की बात थी। 'रेटिकस' के लिए यह डर था कि कॉपर्निकस से मिलने के अपराध में कहीं उसे नौकरी से ही न निकाल दिया जाय। कारण कि वह प्रोटेस्टेटों के चलाये हुए एक विश्वविद्यालय में प्रोफेसर था।

लेकिन 'रेटिकस' ने इस बात की कोई परवाह न की। वह कॉपर्निकस के सिद्धांतों को समझने और कॉपर्निकस से बातचीत करने के लिए बहुत उत्सुक था।

कोई साल भर तक वह कॉपर्निकस के साथ रहा। दोनो में खूब खुल कर बाते होती रहती। दूसरे लोगों ने कॉपर्निकस से मिलना-जुलना तक छोड़ दिया था, इसलिए चौबीसों घंटे दोनो साथ गुजारते।

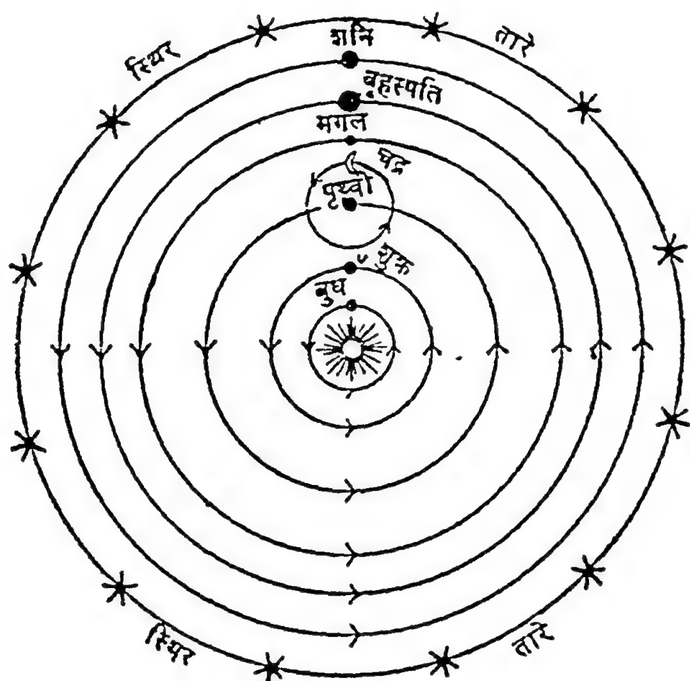
साल भर बाद 'रेटिकस' वापस चला गया। सन् १५४० में उसने एक पुस्तिका प्रकाशित की, जिसका नाम था, 'प्रथम विवेचन'। इस पुस्तिका में पहली बार कॉपर्निकस के सिद्धातों का वर्णन किया गया था।

अब कॉपर्निकस के कुछ मित्रों ने पूरा ग्रंथ प्रकाशित करने के लिए उस पर जोर डालना शुरू किया। कॉपर्निकस को भी थोड़ी हिम्मत बधी।

सन् १५४१ में उसने अपने ग्रंथ की पांडुलिपि

प्रकाशित करने के लिए दोस्तों को दे दी। लोगों के शोर मचाने के कारण अपनी पुस्तक का समर्पण उसने स्वयं पोप को किया।

कॉपर्निकस ने अपनी सफाई में यह भी कहा कि पुराने विद्वानों में इस बात पर मतभेद है कि पृथ्वी



कॉपर्निकस के अनुसार सूर्य, बुध पृथ्वी आदि की स्थिति :

सूर्य के चारों ओर घूमती है या सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा करता है। इसलिए जहां दो मत हो सकते है, वहा

तीसरा मत प्रस्तुत करने में कोई बुराई नहीं मालूम होती।

एक मित्र ने यह भी सुझाव दिया कि साफ-साफ यह न कहा जाये कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है और सूर्य हमारे सौरमडल का केन्द्र है। ऐसा कह कर मुफ्त का बखेड़ा क्यों मोल लिया जाये ? बहुत से लोग इसे धर्म पर आघात समझेगे। कट्टरपंथियों की ओर से जबर्दस्त विरोध उठ खड़ा होगा। इसलिए बात गोल-मोल कही जाय। यह कहा जाय कि तारों की चाल सचमुच क्या है, इसका पता नही चल सकता, लेकिन हमारे अवलोकन से पता चला है कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। ऐसा कहने से सही वैज्ञानिक बात भी कह दी जायेगी और किसी प्रकार का बखेड़ा भी नही होगा। सांप भी मर जायेगा और लाठी भी नही टूटेगी।

किन्तु कॉपर्निकस ने इस सुझाव को नही स्वीकार किया। उसका कहना था कि जिस बात को मैं सही समझता हूं, उसे ही कहूँगा।

उधर तो उसके मित्र उसकी पुस्तक को प्रकाशित करवाने में लगे थे और इधर सन् १५४२ में कॉपर्निकस बिल्कुल पगु हो गया। उसे बराबर बेहोशी के दौरे

पड़ते। कभी-कभी तो खून की नसें तक फट जाती। दो-चार दोस्तों को छोड़ कर कोई भी कॉपर्निकस से उसकी खैरियत पूछने नही आता था।

इस बुरी हालत मे पड़े-पड़े करीव एक साल वीत गया।

सन् १५४३। २४ मई का दिन।

आज कॉपर्निकस के जीवन का अंतिम दिन है, लेकिन आज ही उसके जीवन का सवसे महत्वपूर्ण दिन भी है। आज के ही दिन एक घुड़सवार वहुत तेज घोड़े पर सवार होकर, विजली की रफ्तार से घोड़े को दौड़ाता हुआ, कॉपर्निकस की प्रकाशित किताव लिये उसके घर की ओर भागता आ रहा है।

सांस टूटने से पहले कॉपर्निकस की सारी जिंदगी की कमाई उसके सामने थी। किन्तु कॉपर्निकस की सभी शक्तियां समाप्त हो चुकी थी। वह अपने ही ग्रंथ को पहचान नही सका। ग्रंथ का नाम था 'दि रेवो-ल्यूशनिवस ऑरवियम सेलोशियम लिवरी हेक्स' अर्थात् आकाश गोलो के परिक्रमण सम्वन्धी छ. पुस्तके।

पृथ्वी नहीं सूरज

कॉपर्निकस के सिद्धात क्या थे ?

चाद-सितारो और पृथ्वी के बारे में तुम आज बहुत सी बाते जानते और समझते हो। उनके सही होने के बारे में तुम्हे कभी संदेह भी नही होता। इनमें से ज्यादातर बाते कॉपर्निकस ने अपने ग्रंथ 'परिक्रमण' में पहली बार ससार के सामने रखी थी। उसका विचार था कि :

१. पृथ्वी सृष्टि का केन्द्र नही है। वह भी एक छोटा-सा ग्रह है। कई ग्रह उससे कई सौ गुना बड़े हैं। बृहस्पति, जो देखने में इतना छोटा प्रतीत होता है, हमारी पृथ्वी से डेढ़ या पौने दो हजार गुना बड़ा है।

२. पृथ्वी स्थिर नही है। एक हजार मील प्रति मिनट की रफ्तार से ६० करोड़ मील का चक्कर लगा कर साल भर में वह सूरज के चारों ओर एक बार घूम आती है।

३ पृथ्वी की भांति ही पांच और भी ग्रह हैं।

बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति और शनि। ये सब पृथ्वी ही की तरह, सूर्य के चारो ओर चक्कर लगाते है।

४. इस पूरे परिवार का पितामह सूर्य है। वही सौरमंडल का केन्द्र है।

५. सभी ग्रहो का मार्ग वृत्त जैसा है और उनकी दूरी सूर्य से सदैव समान रहती है। यू समझ लो कि सूर्य को केन्द्र मान कर छः काल्पनिक वृत्त खीचे गये हैं। पहले वृत्त की केन्द्र से दूरी है ३ करोड़ ६० लाख मील; दूसरे की ६ करोड़ ७० लाख मील; तीसरे की ९ करोड़ ३० लाख मील; चौथे की १४ करोड़ १० लाख मील, पांचवे की ४८ करोड़ ३० लाख मील; और, छठे की ८८ करोड़ ६० लाख मील।

६. पहले चक्कर पर बुध ८८ दिन में अपना सफर पूरा कर लेता है। दूसरे पर शुक्र २२५ दिन में; तीसरे पर हमारी पृथ्वी लगभग ३६५ दिन मे अपनी परिक्रमा समाप्त कर फिर वही चक्कर शुरू करती है। चौथे पर मगल ६८७ दिन मे, यानी हमारे लगभग दो साल की अवधि में, एक चक्कर पूरा करता है। बृहस्पति को पूरे बारह वर्ष लगते है। शनि को तो दस, पन्द्रह या बीस नही, पूरे-पूरे तीस वर्ष लगते है। यू समझ लो कि एक बच्चे के जन्म पर शनि जिस स्थान

पर होता है, उसी स्थान पर शनि को वापस आने में इतना समय लग जायेगा कि बच्चा स्वयं पिता बन जायेगा।

७. आकाश एक गोला है, जो इन सब चक्करों को घेरे हुए है। उसका व्यास बहुत अधिक है और उस गोले के तल के निकट तारे अपने-अपने स्थानों पर ठहरे हुए हैं।

८ चन्द्रमा पृथ्वी के चारों ओर घूमता है। उसमें स्वयं कोई प्रकाश नही है। सूर्य की रोशनी चांद के तल से टकरा कर पृथ्वी पर लौटती है।

९. चांद का पृथ्वी के चारों ओर घूमना कोई बड़े सम्मान की बात नही। दूसरे ग्रहों के भी अपने-अपने चन्द्र है। बेचारे बुध और शुक्र को तो छुट्टी है, लेकिन मंगल के चारों ओर दो-दो चांद फिरते रहते हैं। शनि के नौ-नौ चाद है और बृहस्पति के चांदों की तो पूरी पलटन है। हमारे चांद के समान बड़े-बड़े चार चाद बडे अनुशासन के साथ, कदम-से-कदम मिलाते हुए, उसके चारो ओर घूमते रहते हैं और उनके पीछे-पीछे सात छोटे-छोटे चांद और। ऐसा लगता है कि ग्यारह चादों का यह दल बृहस्पति को निरन्तर फौजी सलामी देता रहता है।

१०. यह पूरा आकाश का गोला सूर्य, ग्रहों, चांदों और सितारो की भीड़ लिये हुए चौबीस घटे मे पूर्व से पश्चिम की ओर घूम जाता है।

११. पृथ्वी का वर्ष दो प्रकार का होता है : ऋतु वर्ष और तारा वर्ष। हमारी पृथ्वी को सूर्य के चारो ओर एक चक्कर पूरा कर लेने मैं जितना समय लगता है, उसे तारा वर्ष कहते है। तारा वर्ष ३६५ दिन ६ घन्टे ९ मिनट और ४० सेकेंड का होता है।

ऋतु-वर्ष वह अवधि है, जिसके बीतने पर फिर पुराना मौसम आ जाता है। यह वर्ष तारा वर्ष से २० मिनट बड़ा होता है। इसका मतलव यह हुआ कि कोई ७२ वर्ष मे एक दिन का अन्तर पड़ जाता है। दो हजार वर्ष मे लगभग एक महीने का अन्तर।

१२. यह अन्तर इसलिए है कि पृथ्वी अपनी कीली पर थोड़ी सी झुकी हुई है। चौबीस घंटे में अपनी कीली पर वह एक बार पूरी तरह घूम जाती है।

बलिदान का फल

कॉपर्निकस के सिद्धान्त उसकी मृत्यु के बाद प्रकाशित हुए। अपने जीवन-काल मे वह बहुत शान्ति-प्रिय और संयमी विद्वान समझा जाता था। अतः उसके ग्रन्थ छपने के तुरन्त बाद कोई बवण्डर नहीं खड़ा हुआ।

उस जमाने में छपाई की ऐसी सुविधाएं नही थीं जैसी कि आजकल हैं। फलतः बहुत कम लोग इस ग्रंथ को देख पाये। दूसरे, उसके प्रकाशकों ने भूमिका में यह लिख दिया था कि जो सिद्धान्त पेश किये जा रहे है, उनको अनुमान मात्र ही समझना चाहिए, उन पर विश्वास करने की विशेष आवश्यकता नही है।

यद्यपि कॉपर्निकस ने अपने जीवन-काल में साफ-साफ कह दिया था कि मै अपने ग्रन्थ में ऐसी बात नहीं लिख सकता, तथापि उसके मरने के बाद उसके प्रकाशकों ने यह वाक्य उसके ग्रन्थ मे ठूस ही दिया। नतीजा यह कि बहुत से लोग कॉपर्निकस के ग्रन्थ के बारे मे यही समझे कि यह एक मामूली-सी पुस्तक है, जिसमे पत्रा

बनाने के कुछ नये नियम बताये गये हैं।

लेकिन प्रोटेस्टेंट मत के जन्मदाता मार्टिन लूथर का दिमाग बहुत तेज था। वह भली भाति यह जानता था कि कॉपर्निकस ने खामोशी से जो बीज बोया है, उसके अंकुर फूटने पर परिणाम क्या होगे। वह जानता था कि पृथ्वी की महत्ता घटाने का क्या अर्थ होता है। जब लोग यह समझ लेंगे कि पृथ्वी स्वयं चक्कर लगाती है तो वे देवताओं के निवास स्थान, फरिश्तो की विचरण भूमि, स्वर्ग और नर्क के बारे मे क्या सोचेंगे? और यदि स्वर्ग का प्रलोभन और नर्क का भय बाकी न रहा तो धर्म के नाम पर फुसलाने वालो को कौन पूछेगा?

इसलिए मार्टिन लूथर अपने प्रत्येक व्याख्यान में कॉपर्निकस के सिद्धान्तो की निन्दा करना न भूलता। दूसरी ओर प्रोटेस्टेट धर्म वालों ने अपने विश्वविद्यालयों में कॉपर्निकस के ग्रन्थ का अध्ययन करने और उस पर बातचीत करने पर रोक लगा दी थी।

कॉपर्निकस की मृत्यु के लगभग तेतीस वर्ष बाद इग्लेड के एक विद्वान टामस डिगेस ने खगोल-शास्त्र की एक पुस्तक प्रकाशित की। इस पुस्तक में कॉपर्निकस के भी कुछ सिद्धान्त गिनाये गये थे, जिससे उस देश के

विद्वानों को भी पहली बार कॉपर्निकस की नयी खोजों का पता चला। धीरे-धीरे और लोग भी इन सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश करने लगे।

ये सिद्धात ऐसे थे कि यदि कोई समझदार आदमी एक बार उन्हे पढ़ या सुन लेता तो उन्हें माननें पर मजबूर होता।

कॉपर्निकस तो अब नही था, किन्तु उसके अनु-यायिओं को हर प्रकार की यातनाये दी जाने लगी। बहुत से विद्वानों को इसी अपराध मे दर-दर की ठोकरें खानी पडी। किन्तु उन्होने जिन सिद्धांतों को सही समझा उन्हे त्यागना स्वीकार नही किया।

कॉपर्निकसपथी विद्वानो मे सबमे ऊचा स्थान जियार्दानो ब्रूनो का है। ब्रूनो कॉपर्निकस की मृत्यु के पांच वर्ष बाद १५४८ में इटली के एक छोटे से नगर मैं पैदा हुआ। अभी वह स्कूल मे ही पढता था कि उसका मन समाज की कुरीतियो के खिलाफ विद्रोह कर उठा। उस छोटी सी उम्र मे ही उसने सन्यास लेने की ठान ली। विद्या प्राप्त करके वह पादरी बन गया, क्योकि वह समझता था कि पादरी का जीवन ससार त्याग कर ही प्राप्त हो सकता है।

अपने अध्ययन द्वारा वह इस नतीजे पर पहुँचा

था कि कॉपर्निकस के सिद्धांत अकाट्य हैं। उसकी समझ थी कि तथ्य को समस्त संसार के समक्ष प्रस्तुत करना सच्चे पादरी का परम कर्त्तव्य है। अत: उसने अपने उपदेशो द्वारा कॉपर्निकस के सिद्धान्तों का जगह-जगह प्रचार आरम्भ कर दिया।

ब्रूनो कैथोलिक पादरी था। उसकी शिकायत फौरन कैथोलिक मत के धर्म-सम्राट पोप के पास पहुंचाई गयी। ब्रूनो को नौकरी से निकाल दिया गया। उसकी पेशी हुई।

उसे फैसला सुनाया गया कि कॉपर्निकस के सिद्धांतों पर विश्वास करना और उनका प्रचार करना धर्म के विरुद्ध है।

ब्रूनो सत्य का पुजारी था। पहले वह समझता था कि पादरी बन कर ही सत्य की सेवा की जा सकती है, इसलिए उसने माया को त्याग कर धर्म का मार्ग अपनाया था। अब जब धर्म के अधिकारी ही उसे सच्ची बात स्वीकार करने से रोक रहे थे, तो भला वह कैसे सहन कर सकता था?

उसने निडर होकर कॉपर्निकस के सिद्धातों का समर्थन किया। उसने कहा कि आज नही तो कल इन सिद्धान्तो को अवश्य सारा संसार स्वीकार करेगा।

पोप और उसकी अदालत ने ब्रूनो को बहुत कड़ी कैद की सजा दी। ब्रूनो ने खुशी से हथकड़ी-बेड़ी पहनना स्वीकार किया। लेकिन उसने अब और भी जोरों से कॉपर्निकस के सिद्धातों का समर्थन शुरू कर दिया।



जियार्दानो ब्रूनो

खीझ कर पोप की अदालत ने हुक्म दिया कि ब्रूनो को आग में जिन्दा जला दिया जाये।

सन् १६००!

बहुत बड़ी भीड़ तमाशा देखने के लिए जमा हुई है। ब्रूनो के लिए अभी भी मौका है। बस वह इतना कह दे कि कॉपर्निकस के सिद्धांत गलत हैं। अभी उसकी बेडियां कट जायेंगी। वह बड़े सम्मान के साथ पादरी के पद पर पुनः प्रतिष्ठित कर दिया जायेगा।

लेकिन ब्रूनो का तो कुछ और ही मत था। वह कह रहा था—अगर मेरी चिता के प्रकाश से मानव जाति का मानसिक अन्धकार दूर हो जाये, तो मेरा

जीवन धन्य है।

ब्रूनो का शरीर भस्म हो गया। किन्तु साथ ही कॉपर्निकस के सिद्धांत सदा के लिए मानव जाति के प्रकाश-स्तम्भ वन गये।

अब धीरे-धीरे उन्ही पादरियों ने भी धर्म-ग्रन्थों में से सूत्र खोज-खोज कर यह सिद्ध करना शुरू किया कि कॉपर्निकस ठीक कहता था। दूसरे विद्वानो ने अपने अवलोकन और अध्ययन द्वारा कॉपर्निकस की बहुत सी त्रुटियों को शुद्ध किया।

आज मनुष्य चांद की यात्रा की तैयारी कर रहा है। दर्जनों उपग्रह आकाश की दूरियां नाप चुके है। 'वोस्कोड' तीन-तीन यात्रियो को लेकर गया और लौट आया।

नये-नये 'अणु-यान' बनाये जा रहे है ताकि मनुष्य इस छोटी-सी पृथ्वी तक ही सीमित न रहे, वरन् निर्भय होकर वह मनुष्य जाति के सुख, समृद्धि और शाति के लिए कार्य कर सके।

आज से ४०० वर्ष पहले कॉपर्निकस ने जो वीज बोया था वह आज एक बहुत वड़ा वट वृक्ष वन गया है।